AMRIT DHARA

उचित एवं सत्यपद मार्ग
२०-०६-१९६७ को दिया गया संदेश

समय आ गया है कि मनुष्य आध्यात्मिकता की आवश्यकता के प्रति जागृत किया जाये । सृष्टी के निर्माण कि प्रक्रिया ने मनुष्य में बाहरी प्रवृत्तियों को बनाया है। इसलिये समय के अनुक्रम के साथ उसने अनेक लोकों का निर्माण कर लिया जिसके फलस्वरूप वह जटिल हो गया । वर्तमान दोषयुक्त मानसिक अवस्था उसकी स्वयं की करनी का फल है । दुर्भाग्य से यह मूल तथ्य कि ईश्वर सरल है व सरल माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है, द्रुष्टि विमुख हो गया है । लगभग सभी मंचों से यही उपदेश दिया गया कि ईश्वर का अनुभव साधारण मनुष्य की क्षमता के परे है । यह भ्रमित विचारधारा जो कि स्वघोषित गुरुओं द्वारा प्रचलित की गयी है, लगभग सभी के ह्रुदय में स्थापित हो चुकी है और आज उन्होंने उच्च आकांक्षाओं की अभिलाषा भी खो दी है ।

मैं आप पर यह अंकित करना चाहता हूँ कि साधारण मनुष्य के पास, ईश्वर के साक्षातकरण का उतना ही अधिकार व क्षमता है, जितना कि उनका जो धर्मसत्ता पर बैठे है- बल्कि अधिक । आवश्यक्ता है एक उचित व सत्यपद मार्ग की जिस पर समपूर्ण भक्तिभाव से अनुसरण किया जाये । सत्यपद मार्ग लोगों से आग्रह करता है कि इस साधारण सत्य को जाने व अपने सामान्य जीवन में अपनाये।

ईश्वर सुक्ष्मतम अस्तित्व है व उसके साक्षातकरण करने हेतु केवल सुक्ष्मतम साधन ही हो सकते हैं । इसका अर्थ यह नहीं कि परमात्मा के साक्षातकार के लिये किसी को भौतिक शरीर एवं दुनिया की आवश्यक्ताओं को दुर्लक्ष (नज़र-अन्दाज़) करना पड़े । यदि संयोगवश हम एसे मार्ग में पड़ गये जो कि स्थूलता को बढाता रहे, तब हम निश्चित ही परिपूर्ण वस्तविक्ता की द्रुष्टि

से परे रहेंगे । यह स्थापित तथ्य हैं कि ध्यान एक सूक्ष्म प्रणाली है, यदि ध्यान कि वस्तु साकार न हो। इसीलिये सत्यपद मार्ग में हम यह सलाह देते हैं कि यह मान कर ध्यान करें कि दिव्य प्रकाश ह्रुदय में उपस्थित है । उपनिषदों ने भी इसकी पुष्टी की है । यह अभ्यास, (योगिक-प्राणाहुति) सन्चारित दिव्य पुन्जता के सहयोग से, तब तक सूक्ष्म से सूक्ष्म होता जाता है जब तक सुक्ष्मतम नहीं हो जाता ।

शिक्षक का कार्य, मनुष्य के भाग्य को बनाने में एक महत्वपूर्ण घटक है । निसंदेह यह एक तथ्य है कि अभ्यासी स्वयं के प्रयास से एक सुधार के स्तर के ऊपर नहीं उठ सकता क्योंकि वह सूक्ष्म प्रभाव के सम्पर्क में आता है जिसे वह पार नहीं कर पाता । निम्न अवस्थाओं में भी उसका अपने प्रयास से आगे बढना कठिन कार्य है । उसे मात्र मानवीय चेतना का ही आभास होता है । उसे दैवी चेतना में एक के बाद एक बढ़ना है जो उसे अंततः लक्ष्य तक ले जायेगा ।

यह हमारी दुख:द गाथा है कि हम दैविकता के वस्ताविक रूप के बारे में विचार तक नहीं करते क्योंकि हमने अभी तक वैसा वातावरण ही नहीं बनाया है । हम वापस अंधकार की ओर जाते हैं जबकि हमें प्रकाश की ओर अग्रसर होना चाहिये, और हम इस में गर्व महसूस करते हैं । इसीलिये हम वास्तविक्ता से अत्यंत दूर रहते हैं । यदि ये तथ्य हमारे सामने लाये भी जाये तभ भी हम इन्हें सुनना नहीं चाहेंगे, क्योंकि अधर्मी धार्मिक लोगों के बनाये हुऐ वर्तमान वातावरण के प्रभाव से हमने अपने विवेक की क्षमता को खो दिया है । मेरा विश्वास है कि बदलाव आयेगा यदि मानवता का उत्थान होना है - और मानवता का उत्थान तो होना ही है - या तो वह काल के थपेढों से होगा या अनुभव से जिसमे कुछ समय लगेगा ।

राज योग और सत्यपद मार्ग
२७-११-१९६३ को विजयवाड़ा में दिया गया संदेश

संसार के सभी धर्मों ने ईश्वर के अनुभव हेतु कोई न कोई मार्ग बताया है। उन्होंने जीवन के उच्चतर आदर्श भी दिये और अधिकांश लोगों ने उनको अपनाना शुरु कर दिया । जैसे जैसे समय व्यतीत हुआ उन्होंने अन्य पहलुओं में झाँकना शुरु कर दिया, क्योंकि समय की मार ने उनमें यह बदलाव लाया। भौतिक संसार का वातावरण उनको आकर्षित करने लगा और जीवन की ज़रुरतें उनको दूसरा रास्ता अपनाने के लिये मजबूर करने लगी। कला और कौशल भी पनपा और कलाकारों ने देवी देवताओं के विभिन्न रुपो और नामो से मूर्तियाँ बनाई और लोगों ने उन्हें पूजना शुरु कर दिया।

उस समय के विवेकशील लोगों ने प्रारंम्भ करने के लिये एसी पूजा पद्धित बतायी जो कि अन्ततः उन्हें योग तक ले जा सकती है, जो ईश्वर के अनुभव का अचूक मार्ग है। परन्तु प्रकृति के नियम अनुसार उत्थान और पतन क्रमशः आते रहते है। उनका चिंतन पूजा के वास्तविक ओर तक नही पहुँच सका और फलस्वरूप ये छवियों मानवरूपी ईश्वर बन गयी। पूजा की विधि भुला दी गई है- जिसका परिणाम हम आज भी देख रहे हैं। स्थूलता इतनी बढ गयी है कि दैविक कृपा में बाधक बन गई है। यदि स्थूलता का संचन जारी रहे, तो उच्च-स्तरों तक पहुँचना असंभव है। यह सत्यपद मार्ग पद्धति की सुन्दरता है कि यह इस स्थूलता को साफ़ करती है ताकि दैविक कृपा उतर सकें। परंतु यदि स्थूलता का संचन होता रहेगा, तो अभ्यासी हर कदम पर लड़खड़ाता और पीछे रहेगा।

एक और समस्या जो इस मार्ग में बाधक है, वह यह कि आज कल के लोग योग से डरने लगे है, क्योंकि जब भी योग की बात होती है उनका ध्यान

हठ-योग, गहरी श्वास और अन्य चीज़ों की ओर जाता है जिन से शायद कई लोगों को हानी हुई होगी। ऐसे बहुत सारे लोग है, जिन्होंने हमारी सहज मार्ग पद्धति- जो कि संशोधित राज योग है, उसकी सक्षमता को परखने नही चाहा, क्योंकि जो वह कर रहे हैं उस से वह संतुष्ट हैं। अपनी आदत अनुसार वह अपने हट से अपनाई हुई पूजा प्रणाली से संतुष्टि पाते हैं। वह इसे आध्यात्मिक उत्थान समझते हैं जब कि वास्तव मे ऐसा नहीं है। वह संतुष्टि को शांति समझते हैं। परंतु संतुष्टि स्थूल प्रकार के इंद्रियों से संबधित है और शांति हमारी आत्मा के समीप है। यदि ऎसी पूजा की एक दिन उपेक्षा हो जए तब वह बेचैनी महसूस करते हैं परंतु यदि शांति हो तो बेचैनी का सवाल ही नहीं उठता। हमारे आध्यत्मिक प्रगती के साथ हमारी शांति की प्रकृति बदलती रहती है और अंत मे हम शांति रहित शांति प्राप्त करते हैं। यदि हमें आध्यात्मिक प्रगति करनी है तो हमें सीमितता में अनन्त से शुरुवात करनी चहिए। इस प्रकार हम वास्तविक अस्तित्व से संबध स्थापित करते हैं।

हमारा अगला कदम यह रहेगा कि जब सीमितता का विचार धुल जाएगा हम अनन्त में खोने लगेंगें । अब द्वार खुल गया हैं और हम मार्ग पर आ गाएं हैं। जब सीमितता चित से हट जाएगी तब रास्ता साफ रहेगा। हम अनन्त में और अनन्त की ओर बढते हैं, इस के फलस्वरूप अनंत का विचार तक नहीं आएगा। अब वास्तविक्ता प्रकट होती है। इस के आगे, जब हम ने वास्तविक्ता में छलांग लगा दी, तब नाटक समाप्त होता है और दृश्य आरंभ होता है। परंतु यह अंत नहीं है। आगे आगे जाते जाए । यह भी नहीं, यह भी नहीं - "नेति नेति"!

निरन्तर स्मरण

बैंगलोर में दिया गया संदेश , १८-१२-१९६८

मैं आप सब की संगति में बहुत प्रसन्न रहा। जब मेरे सभी सहयोगी एक स्थान पर एकत्रित होते हैं, वह स्थान मेरे लिये मंदिर बन जाता है और यह उनका कर्तव्य है कि वह अपने हृदय को स्वयं मंदिर बनाये। मैं प्रसन्न हूँ कि आप सब लोग निर्धारित तरीके से ध्यान करते है; परंतु कुछ लोग ध्यान समाप्त होने के उपरांत अनासक्त रहते है। वह ईश्वर का विचार भूल जाते है और सूर्य का प्रकाश रहने तक स्वयं अपने को ही याद रखते हैं। यह उनका कार्य है कि वह दैविक उददेश्य के लिये स्वयं को ढ़ाले। यदि प्रारम्भ में ही वह यह सोचें कि यह हमारा मिशन है और यह हमारा ईश्वर है तब उन्हें ईश्वर के स्मरण में बहुत सहायता मिलेगी।

जीवन की समस्या का समाधान
मई १९७० का संदेश

अत्यंत हर्ष की अनुभूती के साथ, मैं आप लोगों को एक यह संदेश भेजने का अवसर ले रहा हूँ। यह कदाचित छोटा है, परन्तु यह मेरे हृदय की गहराई से अत्यन्त प्रेम एवं स्नेह के भाव से फूट कर निकला है।

आत्मा अपने विशिष्ट गुणों की अनुभुति के लिए उत्सुक है, जो कि विलुप्त हो गये है और यह महत्वहीन व्यक्ति अपने सह-तीर्थ-यात्रीयों से अनुरोध करता है कि वह मुक्ति के मार्ग पर अग्रसर हों। मुझे सह-यात्रीयों की अभिलाषा केवल इसलिए है कि, वास्तविक गंतव्य तक सुरक्षित आगमन में, मैं उनकी सेवा कर सकूँ । पहली दृष्टि में यह विचार आप को पराया लगेगा परंतु यदि आप तनिक रुक कर जीवन की समस्या (गंतव्य) पर विचार करेंगे तब आप निश्चय ही इस निष्कर्ष पर पहुँचेंगे कि आप अपने वास्तविक घर की ओर प्रस्थान कर रहे हैं, जहाँ से आप भाग्य की व्यंगता के कारण छीन कर दूर कर दिये गये हैं ।

जब हम इस कथन 'भाग्य की व्यंगता' का प्रयोग करते हैं तो वह हमें असंतुलित स्वभाव की याद दिलाता है। जब तक संतुलित अवस्था थी, हमारा अपना कोई रूप नहीं था। हमें केवल अपने आप को प्रकट करना है और अपना संतुलन पुनः स्थापित करना है, जो कि हमने खो दिया था।

कितना सरल लगता है जब हम यह कहते है कि हमने अपना संतुलन पुनः स्थापित कर लिया है! निसंदेह यह सरल कार्य है, किंतु इस का अनुसरण करना अति कठिन है, क्योंकि हमने अपनी असंतुलित अवस्था के कारण गहन जटिलता बना ली है। हम सदा अपने मार्ग की खोज या जीवन की समस्या का समाधान कठिन साधनों के द्वारा करना चाहते हैं जो की अत्यंत

सामान्य रूप से हमारे देश में प्रचलित हैं। इसके कारण निराशा और आशाभन्ग होती है। हम चर्बी से, अर्थात भौतिक ज~झान से परिपूर्ण वस्तुओं से सार निकालना चाहते है, न कि हड्डीयों से जहाँ का अत्यधिक फ़ास्फ़रस तत्व कणों को प्रकाशित कर देगा, चाहे वह कितने ही मैले क्यों न हों। इसी कारण हमारी कठिनाई इस संघर्ष में और बढ़ जाती है।

सरल वस्तु की प्राप्ति के लिए सरल साधन अपनाए। कट्टर-नीति से हमें कुछ लाभ नहीं होगा। केवल अभ्यासिक साधन ही हमारे भाग्य का निर्माण हो सकता है, ऐसे व्यक्ति के मार्गदर्शन में-जिसने वास्तविक दूरी नाप ली है और आदी उदभवस्थान की खोज कर ली है।

भारतवर्ष में ऐसे व्यक्ति हैं जो कि सरलता से आप को आपके अति प्रिय वास्तविक गंतव्य तक मार्गदर्शन कर सकते हैं। किंतु चुनाव आप को स्वयं करना है। आप की खोज में ईश्वर आप का मार्गदर्शन करे इसके लिये मैं यह कहूँगा कि जहाँ आप को सेवा भाव में वास्तविक मार्गदर्शक के अभिप्राय मे कोई स्वार्थ न मिले, वहीं वास्तविकता का वास है। एक और विष्य जिसका विशेष ध्यान रखें, कि यह जान लें व विश्वस्त हो जाएँ कि वही व्यक्ति जो अपनी आन्तरिक दैविक शक्ति से आप की चेतना को जगा सकता हो ताकि आप का कार्य सरल हो जाए, आध्यात्मिक मार्गदर्शन के लिये योग्य व्यक्ति है। ऐसे व्यक्ति का मिलना जीवन समस्या के सफल समाधान का निश्चित लक्षण है। आप के लिए मैं इतनी ही प्रार्थना करता हूँ कि साधको को एसा मार्गदर्शक प्राप्त हो। तथास्तु!

अब मे यह समझता हुँ, कि आप के आध्यात्मिक उत्थान के लिए मेरे प्रार्थना करने योग्य कुछ विशेष नहीं रह जाता, यदि आप को एसा व्यक्ति वास्तविक मार्गदर्शक के रूप में मिल जाये। कर्तव्य-निष्ठानुसार, मैं यह चाहता हूँ, कि आप सब को प्रकाश का बोध हो।

वास्तविक प्रकाश

हैदराबाद में २४-१०-१९७४ का संदेश

उनके ७५ वें जन्मदिवस की संध्या के उत्सव-समारोह पर दिया गया संदेश

मैं आप के उत्साह का मान करता हूँ जो कि मेरे पिच्चतरवें जन्म दिवस के उत्सव समारोह से संबन्धित है। यदि मैं, यह ध्यान में रखते हुए स्वयं को देखूँ- तब यह प्रश्न उठता है, कि क्या मैं इस तरह के अवसर के योग्य हूँ। उत्तर यह मिलता है कि यह सब अभ्यासियों की शक्ति है, जो कि मेरी आन्तरिक भावनाओ के अनुरूप काम कर रही है। अत: श्रेय आप को जाता है। मैं तो मात्र नाथ के हाथों मे एक खिलौना हूँ।

मैं बीमार था और अभी भी कमज़ोर हूँ। किंतु जब मैं नाथ का ध्यान करता हूँ, तब परमात्मा के रिसते हुए प्रभाव से युव्य हो जाता हूँ। रोग से वह सभी घृणा करते हैं जो पीड़ित हैं। परंतु वस्तुतः यह शुद्धिकर्ता हैं। जब अशुद्ध 'संस्कार' 'भोग' के लिए आते हैं तब विधाता कि दृष्टि हम पर रहती है। हमारे लिए विधाता की वह दृष्टि; शिशु को पालना झुलाने जैसा कार्य करती है, जिससे हमारा पोषण होता है। जब अच्छे 'संस्कार' भोग के लिए आते हैं तब भी ईश्वर की दृष्टि हमारी ओर रहती है। अर्थात रोग से भी हमारी भलाई ही होती है जो अपने साथ बुरे 'संस्कार' ले जाते हैं। यह सब ईश्वर के प्रेम का खेल है। यदि मैं यह कहता हूँ कि प्रेम और घृणा एक ही हैं तो अचरज न करें। प्रेम सकारत्मक विचार-धारा है और घृणा नकारत्मक विचार-धारा है। यह बड़ी विचित्र बात है कि लोग ईश्वर का स्मरण नहीं करना चाहते जो कि अति दयालु और कृपालु है। उसके के सभी कार्य हमारे लिए अति लाभदायक हैं। लोग यह सोचते है कि ईश्वर का स्मरण करना हमारे लिए लाभदायक व्यवसाय नहीं है, परंतु मैं कहता हूँ कि यह दुनियाँ के सबसे बड़े कारखाने से भी अधिक लाभदायक व्यवसाय है।

मुझे किसी के मुख से विश्वव्यापी-प्रेम की बात सुन कर बड़ी प्रसन्नता होती है। सामान्यतः आज के संत विश्वव्यापी-प्रेम का उपदेश देते हैं किंतु उस को पाने की विधि आप को खोज कर नहीं बताते। मैं कहता हूँ कि केवल घृणा को हटा दो तो विश्वव्यापी-प्रेम विद्यमान है। मान लें किसी व्यक्ति को झूठ बोलने कि आदत है और वह इससे छुटकारा पाना चाहता है तो उसे सच बोलना शुरू करना चाहिए, क्योंकि एक प्रकार के चरित्र का निर्माण, एकाग्रता के साथ उसके आधार में, सहज रूप से बनने लगेगा। यदि आप झूठ को हटाने की और ध्यान केन्द्रित करेंगे, तब वह उस को और प्रबल से प्रबल बनाता जाएगा क्योंकि एकाग्रता से उसे शक्ति मिलती है। एसा ही विश्वव्यापी-प्रेम के साथ है। वह रेशम के कीड़े कि तरह अपने कोश में है।

मैं आप को अपनी हाल ही में हुई बिमारी के समय की एक घटना बताता हूँ। मैं बेसुधी की स्थिति में था। मैं ने एक अभ्यासी को अद्वितीय शक्ति व अचूकता से प्रणाहुति दे, उस की अवस्था को पूर्ण देखते हुए कुछ क्षणों में उसको ५८ बिंदुओं को पार करने मे मदद करी। मैंने आपने मिशन के अन्य भाईयों को भी प्रणाहुति दी। मैंने अभ्यासियों के कुछ प्रश्नों का उत्तर भी दिया। मेरे वापस ठीक होने के बाद उन्होंने बताया कि वह उत्तर से पूर्णतः संतुष्ट थे। यह बहुत कठिन नहीं है। अपने आन्तरिक चित्त को, अनुशांसन के अभिप्राय को समझने के लिये शुद्ध करें, बस फिर वह वस्तु वही है। साथ ही, हमारी प्रणाली के सामर्थ्य और अभ्रान्ति की ओर ध्यान दे- कि मिशन के कार्य की ज़रा भी क्षति नहीं हुई।

मिशन का कार्य, नाथ की शिक्षा को प्रत्येक व्यक्ति के हृदय तक पहुँचा कर मानवता को दुर्भाग्य से बचाएगा। मानव-जाति आज भौतिकता के अंधकार में डूबी हुई है। भय, लालच और द्वेष ने मानव को जकड़ लिया है और उसे मानवमूल्यों का ज़रा भी बोध नहीं रहा। केवल आध्यात्मिकता की मशाल ही बढ़ते हुए क्रूर अंधकार को मिटा कर वास्तविक मानव को वापस ला सकती

है। वास्तविक्ता का प्रकाश प्रत्येक के हृदय में प्रकाशित हो ताकि हम दिव्य की आकांक्षाओ तक उठ सके!

प्रेम- विश्व-व्यापी

शाहजहाँनपुर में आश्रम के उद्घाटन अवसर पर दिया गया संदेश, जनवरी १९७६

परीस्थितिया आती व जाती रहती है, परंतु हम वेसे ही रहते हैं। यदि हम अपना अच्छी तरह से सुक्ष्म निरीक्षण करें तो एक अपरिवर्तनशील अवस्था पाएंगे , परन्तु हम परिवर्तनशीलता से जुड़े रहते हैं और या तो हम उसमे रुचि लेते है या घृणा करते हैं और दोनों ही बंधन की कड़ियाँ हैं। यदि हम शांतिपूर्ण जीवन जीना चाहते हैं तो हमें इन सब परीस्थितियो से ऊपर उठना चाहिए। अगर हम मन लगा कर अभ्यास करें तो हमारी पद्धती से एसे परिणाम प्राप्त होते हैं।

अनेक सहयोगी मुझे लिखते हैं कि वह विचारों और भावनाओं की दलदल से निकलने का घोर प्रयास कर रहे हैं। निश्चित रूप से यह अभ्यासी का कर्तव्य है और उसे इस अवस्था तक जागृत किया जाता है और इस रूप में कार्य आरंभ होता है।

कपड़ा जुलाहे की बुद्धिमता से तैयार होता है। उसके हाथ काम कर रहे हैं परंतु हाथों के चलाने में उस की बुद्धिमता प्रदर्शित हो रही है। बुद्धिमता का अपना केंद्र है, परंतु वह हाथों के द्वारा भी काम करती है, इसी तरह, जब मन में बेहतर बनने का विचार है तो वह उन्नति का निश्चित लक्षण हैं।

ईश्वर ने संसार का निर्माण किया ताकि हर फूल अपने उचित स्तर तक पनप सके। किंतु समय के थपेड़ों ने उसे ईश्वर के उददेश्य को भुला दिया। इसलिए कुछ लोगों को जीवन का लक्ष्य मनोरंजन लगता है और कुछ को जीवन नीरस प्रतीत होता है। परंतु प्रश्न यह है कि जीवन क्या है? यह हमारे अस्तित्व की वह अवस्था है जो हमारे जीवित रहने तक स्थाई रहनी चाहिए

, संपूर्ण रूप से वास्तविक अस्तित्व से जुड़े रहते हुए, हर कदम पर उस वास्तविक अस्तित्व का सुगंन्ध लेते हुए ।

बच्चों का यह स्वभाव होता है कि कभी वह माँ से अधिक प्रीति महसूस करते हैं तो कभी अपने पिता से। इस सब का आधार प्रेम है, अतः वहाँ आसक्ति भी है पर जरुर इतनी सारी शाखाएँ नहीं होगीं।

हमें जल-पक्षी और बत्तख कि भांति जीवन व्यतीत करना चाहिए, जोकि जब वह पानी से बाहर आते हैं तो उन के पंखों पर उसका कोई प्रभाव नहीं होता। इसी तरह हमें बिना आसक्ति से मलिन हुए अपने माता-पिता और परिवार के सभी लोगों से प्रेम करना चाहिए। इस विचार को व्यक्त करने का यह आध्यात्मिक तरीका है।

यह गहरी मातृ-प्रेम की भावना पहली बार दिखलाती है कि व्यक्ति ने एक कदम आगे बढ़ाया है। यह प्रेम के तीवित्रा से बढ़ने का लक्षण है। अब उसने मूल आधार से वह प्रेम सीखना शुरू किया, जो कि सब तरफ़ फैलता है।

व्यक्ति को केवल अलग-अलग होने की भावना (टूटेपन) को हटाना है तब उसे अनुभव होगा कि प्रेम सभी की ओर समानता से बह रहा है, और यही प्रेम विश्व-व्यापी हो जाता। एसे में माँ, पिता, भाई, बहन, पती, पत्नी और सभी का हिस्सा बराबर का होगा। प्रेम बुरा नहीं है किन्तु हमें उस का उचित उपयोग करना नहीं आता। यह हमारी प्रणालि समय के साथ धीरे-धीरे सिखा देगी।

यह प्रकृति का छुपा हुआ आदेश है कि प्रत्येक आत्मा सुखी और शांतिपूर्ण जीवन जीए। यदि हम एसा नहीं करते तब हम "उस के" संसार को दूषित कर रहे हैं। हम सब गृहस्थ है परन्तु हमें अपने सभी कार्यों मे संयम

अपनाना चाहिए और धन भी हमारे लिए सब जगह आवश्यक है। इस कारण यह हमारा कर्त्तव्य हो जाता है कि हमारे पास अपने जीवन को अच्छी तरह जीने के लिए धन हो। परंतु धन के लिए, धन से लगाव एक रोग है, 'डन्स' के अनुसार यह एक तरह की हीन लालसा है।

जीवन की ज़रूरते थोड़ी होनी चाहिए। अग्रेंज़ी में कहावत है कि "सादा जीवन और ऊच्च विचार"। आसक्ति में अनासक्ति अनिवार्य है। सब से सुखी मनुष्य वह है जो हर स्थिति में सुखी है।

मैं यहाँ सब की सेवा के लिए हूँ और यह प्रार्थना करता हूँ कि सभी अपनी कठिनाइयों को पार कर सुखी जीवन जीएँ; जो कि आध्यात्मिक्ता के अनुसार जीने योग्य है। मैं केवल भारतवर्ष का नहीं हूँ बल्कि सम्पूर्ण संसार का हूँ। इसलिए मैं यह चाहता हूँ कि असीम से प्रेम करने में छुपी सुन्दरता का स्वाद सभी चखे।

सम्पूर्णता प्रवीणता का मार्ग
तिन्सुकिआ में २५-११-१९७७ को दिया गया सन्देश

मेरी प्रार्थना है कि यह शुभदिन, जिस पर मिशन के तिन्सुकिआ सैन्टर के ध्यान सभाग्रह का उदघाटन हो रहा है, मिशन के देश और विदेश के अभ्यासियों के लिए अहोभाग्य का पूर्वसूचक हो, खास तौर से तिन्सुकिआ सैन्टर के अभ्यासियों के लिए।

अधिकतर अभ्यासियों मे यह सामान्य धारणा भरी रहती है कि अभ्यास कि जो विधियाँ बताई गई है केवल वही विकास की अंतिम अवस्था तक पहँचने के लिए आवश्यक है। इस के परे उनका विचार बिल्कुल नहीं जाता। हम यह कहते हैं कि राज-योग हमारी नींव है और वस्तुतः यह सत्य है, किंतु उनकी सोच इस की गहराई तक नहीं जाती अपितु मात्र नियम का पालन कर रुक जाती है। किंतु यह निश्चित है कि सत्यपद मार्ग में प्राणाहुती की सुगंध बसी है, परंतु प्रेम और भक्ति भाव वह चीज़े है जो कि पीछे रह जाति हैं। ध्यान कि विधि के साथ यह आवश्यक है कि यह(प्रेम व भक्तिभाव) भी विद्यमान हो। मेरे लिए यह अनिवार्य रहा है कि मैं यह जोर दे कर व्यक्त करूँ कि दोनों पहलुओं को एकत्र होना चहिए क्यों कि एसा करने से संभवतः साधक अपने लक्ष तक बहुत जल्दी पहँच सकता हैं। यह चीज़े अपने अन्दर पैदा करना आप कि जिम्मेदारी है। एसा करने का साधन यह है कि हम प्रमुख उद्भव को, जो कि ईश्वर है, उसे सदा याद रखने का प्रयास करें। इसमें भी कुछ लोग विरोध कर सकते हैं कि इस प्रयास से दिमाग इतना थक जाता है कि संभवतः इसे आधे दिन तक ही याद रख पाए।

जो भी काम हम करते हैं उसे इस विचार से करें कि " यह दिव्य की आज~झा है अतः एसा करना मेरा कर्तव्य है", ताकि स्मरण करने की अवस्था अचल बनी रहेगी, और इससे एक खास लाभ यह है कि संस्कारों का

बनना बंद हो जाता है। हर समय ईश्वर के स्मरण में रहने से हमारे अंदर दिव्य के प्रति गहरी आसक्ती पैदा होती है जो कि उस अवस्था तक ले जाती है जहाँ कि ईश्वर के लिए प्रेम पैदा होता है और बहने लगता है। क्रमशः एसा करने से भक्तिभाव सम्पूर्ण रूप धारण करता है। इसलिए यह तरीका अपनाना अनिवार्य है।

दूसरी अवश्यक्ता है, अच्छा व्यवहार और आचरण, अर्थात हमें एसा काम कभी नहीं करना चाहिए जिस से कोई भी हमारे ऊपर उंगली उठा सके। हमारे दैनिक जीवन के नियम और व्यवहार सब के प्रति बहुत अच्छे और सीधे व स्पष्ट होने चाहिए। एसा करने से आपको अच्छा लगेगा और खुशी मिलेगी, और शांती की अवस्था खुदबखुद आप के अंदर खिल उठेगी। दिव्य के बारे में विचार करने से प्रेम और भक्तिभाव पनपता है। मैं यह निश्चित रूप से कहूँगा कि एसी आसक्ती उत्पन्न करना आप का कार्य है और आप का एक महत्यपूर्ण कर्तव्य है। यदि आप एसा नहीं करते तब हम अपने धर्म को नहीं निभाते, जो कि प्रत्येक सेवा भाव वाले अभ्यासी की ज़िम्मेदारी है और एक फकीर, एक बंदे के गुण यहीं हैं कि वह अपने कर्तव्य का पालन सम्पूर्ण करे। सच्चाई इसी में है कि हुम अपनी दृष्टी को अंदर की ओर केंद्रित करते रहें। यदि आप एसा करते हैं तो आपकी अवस्था वहा रहेगी जहा से" प्रमुख तत्व" हम मे आया है, अर्थात यह हम ने सच्चे "खज़ाने घर" पर निशाना साध लिया है। अब यह हमारे ऊपर है कि हम इस विस्तार की स्थिति को और बढ़ाए। यह विस्तार की स्थिति तब जन्म लेती है जब दिव्य पर ध्यान का अभ्यास करने के साथ साथ हम अपनी दृष्टी ज्यादा से ज्यादा अंदर की ओर केंद्रित करने का प्रयास बनाये रखते है।

यदी आप के अंदर दिव्य को प्राप्त करने की सच्ची लालसा पैदा हो गई है, तब सफलता पाने में तनिक भी समय नहीं लगेगा। आप आनंद की प्राप्ती की ओर देख रहे हैं और मैं लालसा और बेचैनी की बात कर रहा हूँ। परंतु,

भाई, जो खुशी यह लालसा और बेचैनी देते हैं वह शांति में कभी नहीं मिलती। जब बेचैनी बड़ती है और सीमा पर पहुँचती है व शक्ति की सीमा को पार करती है, तब वास्तविक शांति आरंभ होती है।

मेरी यह तीव्र इच्छा है कि मैं लोगों को आध्यत्मिक विकास की अंतिम अवस्था का ज़रा संकेत दूँ। सत्यपद मार्ग की यह शिक्षाएँ उच्चतम हैं क्योंकि व्यक्ति के अंतिम लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए, रखाव सिखाती है। कोई भी शिक्षा जो कि उच्च लक्ष्य की प्राप्ती के लिए है, और लक्ष्य तक पहुँचने में सहायता करे, उसका उच्चतम होना अनिवार्य है। मेरी बेचैनी इसी में है कि आप दिव्य को पाने के लक्ष्य की प्राप्ती के लिये बेचैन बने रहे, केवल यह ही मुझे वास्तविक शांति प्रदान कर सकती है। आप इस तरह जिस हद तक बेचैन रहेंगे उतनी हद तक मुझे शांति मिलेगी। यदि आप इस पर विश्वास करें और याद रखें कि मेरे द्वारा जो भी सेवा लोगों को प्रदान होती है, उस के बदले में मुझे शांति मिलती है, तब आप के लिए एक ही उपाय है कि आप बेचैन बने रहे । चलिए "इस" के विचार में इतनी गहनता से विलीन हो जाए कि "उस" के बारे में ज़रा भी विचार न आये।

अज्ञात की ओर यात्रा

दक्षिण अफ़्रिका की यात्रा के अंत में दिया गया सन्देश
८/०३/१९८१

मैं अपने सहयोगियों की प्रशंसा करता हूँ।
अज~ज्ञात की ओर आगे बढ़े।
उससे प्रेम करें जो सबको प्रेम करता है।
गंतव्य अधिक दूर नहीं हैं।
सतत स्मरण ही साधन है।
आप सभी को आशीर्वाद।

आध्यात्मिक नियति

शाहजहाँनपुर में बसन्त पन्चमी के उत्सव पर दिया गया संदेश, ३०-०१-१९८२

"हम सभी बौद्धिक, नैत्तिक और आध्यात्मिक रूप से जुड़े हुऐ भाई भाई हैं - जो कि मानवीय जीवन का मुख्य ध्येय है। यह और वह समाप्त हो गए हैं। अब ईश्वर के समस्त कार्यों और वातावरण में केवल शुद्धता है, जो कि परमपद असीम के साथ लोगों के आध्यात्मिक भाग्य का निर्माण करती है"।

अंधविश्वास और आध्यात्मिकता
(तिरूपती के सैमिनार में १९७०)

संसार के सभी धर्मो की शुरूवात तब हुई जब हमने आवश्यकता पायी। कुछ वास्तविक अस्तित्व के भीतर से आरंभ हुए और कुछ उस के बाहरी ओर से शुरू हुए। परंतु हरेक धर्म दिव्यता को छूने का प्रयास करते है जो इन सब धर्मों के ऊपर है। यह आम लोगों को वास्तविक्ता में गहरी डुबकी लगाने के लिए तैयार करते हैं। वह कई लोगो के मामले में सफल हुए और कुछ अन्य तरीको से वह पूरे न पड़े, क्यों कि धर्म, जन सामन्य के लिए है और आध्यात्मिकता कुछ चुने हुए लोगों के लिये है। चूंकि करोडों लोग धर्मो को अपनी बुद्धिमत्ता के स्तर अनुसार किसी द्रुष्टिकोण से अपनाते हैं, अब उस की अनेक शाखाएँ हो जाती हैं, क्यों कि विभिन्न मानसिक स्तर के लोग उसे अपनाते हैं। एक तरफ उच्च विचारधारा हैं और दूसरी ओर स्थूल व्यवहार है। परंतु यह चीज़ें अपने बनाये हुए दायरे में अपना काम करती हैं। अब दोनों, सूक्ष्मता और स्थूलता विद्यमान हैं। सूक्ष्म चित्त को महानतम का विचार समझ में आता है और स्थूल चित्त वालो को केवल स्थूलता का विचार हि प्रत्यक्ष है। अब विचार-धारा स्थूल हो गई है। वह लोग स्थूल चीज़ों को धर्म से जोडते हैं और यदि झूठ भी सौ बार बोला जाए तो सत्य बन जाता है। इसी भांति लोगों की स्थूल और विपरीत विचार धारा भी धर्म के विषय का भाग बन गई।

जब हम प्रकाश के बाहर होते हैं तब हम अंधकार में आ जाते हैं। जब हम विवेकशीलता के बाहर रहते है तब हम मूर्ख हो जाते हैं। जब हम दिव्यता से बाहर हो जाते हैं तब हम शैतान(आसुरिक) हो जाते हैं। अब वह वास्तविकता की विपरीत स्थिति में आ गए हैं। उन्होंने उसे अपनाना आरंभ कर दिया जो कि वास्तविकता के अनुरूप नहीं है। दूसरे शब्दों में उन में पाशविक प्रकृति बढने लगी और वह उस स्थिती में झाँकने लगे जो कि एक जानवर मे होती

है। कभी वह सोचेंगे कि "चुंकि मैंने इस गाय को पाला है मेरे पास काफी पैसा आने लगा है, मैंने एक घोडा पाला और मेरे पास एक पोता है"। अत: ऐसे विचार पाले जाते हैं। ऐसी स्थितियों क जब कुछ समय तक पालन किया जाता है तो वह अन्य कई विचारों को जन्म देती है जिन को हम अंधविश्वास कहते हैं, जो कि अपने आप बतलाते हैं कि उन का कोई अर्थ नहीं है। किंतु यह केवल स्थूल विचारधारा का नतीजा है। जब हम स्थूलता के उत्कृष्ट रूप को अपनाते हैं तो हम स्वयं को आध्यात्मिक समझने लगते हैं। यह भी एक अंधविश्वास ही है। व्यक्ति अपने को वह समझने लगता है जो कि वह वास्तविक्ता में नहीं हैं। यदि दूध को मदिरा में मिला दें तब वह दूध नहीं रह जाता।

कोई भी धर्म जब पुराना होने लगता है तब उस में यह सब बातें आने लगती हैं और तब संत लोगों को उसे पुन: सुधारने के लिए आना पडता है। परंतु दुर्भाग्य यह है कि ऐसे संत सदा नहीं आते। वह इसलिए क्योंकि हम उन्हें इस कारण से नहीं बुलाते। हम उन्हें क्यों नहीं बुलाते? क्योंकि लोगों के मन में अंधविश्वास ही अपने आप से एक धर्म बन जाता है। अतः वह इस में इस तरह डूब जाते हैं कि वह सोचते भी नहीं कि इसके ऊपर क्या है। इस अंधविश्वास के परे वास्तव में वह शक्ति है जो संतों को बुला सकती है। और ऐसे द्रुढ भाव की आवश्यकता है जो संसार के समस्त प्राणियों का रूपांतर कर सके। एक डाक्टर बिमारी ठीक कर सकता है परंतु एक गडरिया यह नहीं कर सकता। वर्तमान काल की पुकार क्या है? केवल उद्गम केंद्र से निकलती हुई शक्ति(तेज)। या तो यह हमें भस्म कर दे या गले लगा ले। यदि हम वास्तव में अपनी वृत्ति बदलना चाहते हैं तो हमारी सोच ऐसी होनी चाहिए, जिस के लिए हमें एक क्षत्रिय की तरह आगे बढ कर मैदान में इस कार्य के प्रति अपनी बहादुरी की परीक्षा करनी चाहिए।

****